असहयोग आन्दोलन (1920-1922 ई.)
[Non-Cooperation Movement (1920-1922)]

1919 से 1947 का काल भारतीय इतिहास में **'गाँधी युग'** के नाम से प्रसिद्ध है। इस दौरान भारत का राष्ट्रीय आंदोलन मुख्यतः उन्हीं के नेतृत्व में चला और उसने एक नया स्वरूप और दिशा प्राप्त की। गाँधी ने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को जनआंदोलन में परिवर्तित कर दिया।

भारतीय राजनीति में प्रवेश के पूर्व गाँधी ने दक्षिणी अफ्रीका में भारतीयों के साथ किए गए दुर्व्यवहार तथा रंगभेद की नीति के खिलाफ सफल संघर्ष किया था। 1915 में वे भारत वापस लौटे। इस समय प्रथम विश्व युद्ध प्रारम्भ हो चुका था और इस युद्ध में उन्होंने अंग्रेजों को समर्थन दिया। उनकी सेवाओं से खुश होकर ब्रिटिश सरकार ने भी उन्हें **'कैसरे हिन्द'** की उपाधि से विभूषित किया।

गाँधी ने प्रारम्भ में जनसेवा को अपना लक्ष्य बनाया। उनके मुख्य शस्त्र सत्य और अहिंसा थे। 1916 ई. में उन्होंने अहमदाबाद में साबरमती आश्रम की स्थापना की, जो उनकी गतिविधियों का मुख्य केन्द्र बन गया। 1917 ई. में उन्होंने चंपारण के नील किसानों को निहलों (गोरे नील उत्पादकों) के अत्याचारों से मुक्ति दिलाने के लिए सफल सत्याग्रह किया। इसके बाद 1918 ई. में उन्होंने गुजरात में खेड़ा के किसानों की समस्याओं को सुलझाने में सफलता पाई। वहां वर्षा अभाव के कारण फसल नष्ट हो गई थी, लेकिन सरकारी अधिकारी लगान वसूली के लिए किसानों को परेशान कर रहे थे। गाँधीजी ने किसानों को सत्याग्रह के लिए संगठित किया। बाध्य होकर सरकार को किसानों से समझौता करने के लिए विवश होना पड़ा। 1918 ई. में उन्होंने अहमदाबाद के मजदूरों के वेतन वृद्धि की मांग का समर्थन करते हुए अनशन प्रारम्भ किया। उनका सत्याग्रह सफल रहा। मिलमालिकों ने मजदूरों के वेतन में वृद्धि की। इस प्रकार गाँधीजी के प्रयास के फलस्वरूप अहमदाबाद के मिलमालिकों तथा मजदूरों के मध्य समझौता सम्भव हो सका।

असहयोग आन्दोलन के कारण (Causes of Non-Cooperation Movement)

सत्याग्रह के सफल प्रयोगों ने गाँधीजी को भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाने के लिए प्रेरित किया। इसी समय भारतीय राजनीति में कुछ ऐसी घटनाएं घटी, जिन्होंने गाँधी को अंग्रेजी सरकार के विरूद्ध असहयोग आंदोलन आरम्भ करने की प्रेरणा दी –

(1) प्रथम विश्वयुद्ध का प्रारम्भ (Beginning of First World War)—प्रथम विश्वयुद्ध के समय मित्र राष्ट्रों ने स्वशासन के सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हुए यह घोषणा की थी कि यदि इस युद्ध में वे विजयी होंगे तो संसार को प्रजातंत्र के लिए सुरक्षित बनाएंगे। अतः प्रथम विश्वयुद्ध में भारत ने मित्र राष्ट्रों की पूरी सहायता की। उन्हें इस बात का विश्वास था कि युद्ध में सहयोग तथा बलिदान के बदले ब्रिटिश सरकार उन्हें संवैधानिक तथा प्रशासनिक सुविधाएं प्रदान करेगी, लेकिन जब नवम्बर 1918 ई. में युद्ध समाप्त हो गया तो ऐसा प्रतीत हुआ कि युद्धकाल में भारत के प्रति अपनाई गई उदार नीति अंग्रेजों की कूटनीति थी। युद्धोत्तर काल की ब्रिटिश नीति से भारतीयों में क्षोभ की भावना का जन्म हुआ। ऐसे असंतोष जनक वातावरण में गाँधी ने भारत के राष्ट्रीय आंदोलन को गति प्रदान की।

(2) प्रथम विश्वयुद्ध के आर्थिक परिणाम (Economic Effect of World War)—प्रथम विश्वयुद्ध में अंग्रेजी सरकार ने भारतीयों के जन–धन एवं साधनों का बड़े पैमाने पर उपयोग किया था। स्वयं **लार्ड हार्डिंग** ने यह स्वीकार किया था कि **"ब्रिटेन के युद्ध विभाग ने हिन्दुस्तान का इतना खून बहाया है कि वह सफेद पड़ गया है।"**[1] इस युद्ध में लगभग 12 लाख भारतीय सैनिक विश्व के विभिन्न भागों में युद्ध के लिए भेजे गये। उनके भोजन, युद्ध सामग्री एवं आने–जाने का खर्च भारत सरकार को ही वहन करना पड़ा, जिसके कारण सरकार पर करोड़ों रूपए का अतिरिक्त भार पड़ा। इस प्रकार युद्धकाल में अंग्रेजी सरकार की नीति के कारण भारतीय जनता की आर्थिक दशा काफी विकट हो गई। भारतीय अर्थव्यवस्था अव्यवस्थित हो गई। अनाज व वस्तुओं के मूल्यों में अप्रत्याशित वृद्धि हो गई। साधारण जनता को भीषण कष्ट उठाने पड़े। मूल्यवृद्धि का लाभ अंग्रेज व्यापारियों तथा साहूकारों ने उठाया।

(3) मांटेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार योजना से असंतोष (Unsatisfaction Over Montagu-Chemsford Reforms)—1919 में मांटेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार योजना लागू की गई। इस योजना में भारत सरकार के वास्तविक रूप में किसी भी प्रकार का परिवर्तन करने का सुझाव नहीं था। केन्द्र में सरकार पहले की भांति अनुत्तरदायी और प्रांतों मे भी उत्तरदायित्वपूर्ण शासन की स्थापना नहीं की गई। गृह सरकार का भारत पर पूर्ण नियंत्रण रहा। इस व्यवस्था से उदारवादियों को छोड़कर अन्य राजनैतिक नेता संतुष्ट नहीं हो सके। इस सम्बन्ध में **एनी बेसेन्ट का विचार था कि "ऐसे सुधारों को देना इंग्लैण्ड के अनुदार दृष्टिकोण का सूचक था और इनको स्वीकार करना भारत के लिए अपमानजनक था।"**[2] तिलक ने भी इनको

स्वीकार करना भारत के लिए अपमानजनक माना और इसे असंतोषजनक एवम् निराशाजनक भी कहा। मांटेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार कांग्रेस–लीग के प्रस्तावों से बहुत दूर था।

(4) **रॉलेट ऐक्ट** (Rowlatt Act)—महात्मा गाँधी को असहयोग आंदोलन चलाने के लिए रॉलेट ऐक्ट ने भी प्रेरित किया। 1918 ई. में सरकार ने सर सिडनी रॉलेट की अध्यक्षता में एक कमिटी यह जांच करने के लिए नियुक्त की कि भारत में किस प्रकार और किस हद तक क्रांतिकारी आंदोलन सम्बन्धी षड्यंत्र फैले हुए है और उनका मुकाबला करने के लिए किस प्रकार के कानूनों की आवश्यकता है। समिति ने इसके लिए कठोर कानूनों की सिफारिश की। उदाहरणार्थ–किसी भी व्यक्ति को अब मात्र संदेह के आधार पर बगैर मुकदमा चलाए बंदी बनाया जा सकता था तथा सरकार इस ऐक्ट द्वारा राजनैतिक आंदोलन तथा राज्य के विरूद्ध किसी भी कार्य का दमन कर सकती थी। यह रिपोर्ट अप्रैल 1918 ई. में आई। भारतीय नेताओं के कड़े विरोध के बावजूद 21 मार्च 1919 को इस ऐक्ट को पास कर दिया गया। भारतीयों ने इस ऐक्ट का कड़ा विरोध करते हुए इसे ''काला कानून'' की संज्ञा दी। **गाँधी ने रॉलेट ऐक्ट की आलोचना करते हुए कहा कि 'रॉलेट ऐक्ट" अन्यायपूर्ण है, स्वतंत्रता और न्याय के सिद्धान्तों तथा व्यक्ति के बुनियादी अधिकारों के लिए जिन पर संपूर्ण समाज तथा स्वंय राज्य की सुरक्षा आधारित है, घातक और विनाशकारी है।**"[1] भारतीयो ने इस काले कानून के वास्तविक स्वरूप को दिखाने के लिए नारा लगाया **"कोई वकील नहीं, कोई दलील नही, कोई अपील नही।"**[2] जिन्ना, मदनमोहन मालवीय और मजहर–उल–हक ने कानून के विरोध में केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा से इस्तीफा दे दिया। महात्मा गाँधी ने भी इसका विरोध किया तथा उनके सुझाव पर कांग्रेस ने संपूर्ण देश में 'रॉलेट ऐक्ट' का विरोध करने के लिए हड़ताल का आह्वान किया। रॉलेट ऐक्ट के विरोध में 30 मार्च 1919 को देश भर की दुकानों तथा कारखानों में हड़ताल तथा जनता द्वारा एक दिन के उपवास की अपील की गई, किन्तु बाद में हड़ताल का दिन बदलकर 6 अप्रैल कर दिया गया। इस परिवर्तन की सूचना देर से निकली। इस बीच दिल्ली में 30 मार्च को ही सत्याग्रह कर दिया गया। 6 अप्रैल को देश के अन्य नगरों में हड़ताल हुई। सरकार ने विरोध को दबाने के लिए दमनचक्र चलाया। अनेक स्थानों पर निहत्थी भीड़ पर पुलिस ने गोलियां चलाई, जिससे अनेक व्यक्ति मारे गये। सबसे भीषण स्थिति पंजाब की थी। वहां की घटनाओं की जानकारी प्राप्त करने के लिए गाँधीजी ने पंजाब जाने की योजना बनाई और उनके पंजाब–प्रवेश पर प्रतिबंध लगा दिया। किन्तु गाँधी ने इस नोटिस को मानने से इन्कार कर दिया। अतः पलवल (हरियाणा) में गाँधीजी को 8 अप्रैल 1919 को कैद कर वापस बम्बई भेज दिया गया।

महात्मा गाँधी की गिरफ्तारी का समाचार सारे भारत में आग की तरह तेजी से फैल गया। अनेक स्थानों पर गिरफ्तारी का विरोध करने के लिए जुलूस और जलसे हुए। 10 अप्रैल 1919 को पंजाब के अत्यन्त प्रसिद्ध नेता **डॉक्टर सत्यपाल और डॉक्टर किचलू** गिरफ्तार कर किसी अज्ञात स्थान पर भेज दिए गए। ये दोनों अमृतसर के जिला मजिस्ट्रेट द्वारा गिरफ्तार करवाए गए थे। इस घटना से अमृतसर में बहुत उत्तेजना फैल गई, नेताओं ने निर्वासन का विरोध करने के लिए एक विशाल जुलूस निकाला, जिस पर पुलिस ने अंधाधुंध गोलियां बरसाई। उग्र भीड़ ने अनेक सरकारी भवनों, पोस्ट ऑफिसों तथा बैंकों को आग लगा दी और कुछ अंग्रेजों की हत्या कर दी। 10 अप्रैल 1919 को अमृतसर नगर का शासन सैनिक अधिकारियों के सुपुर्द कर दिया गया, जिसका सर्वेसर्वा जनरल डायर था।

(5) जलियांवाला बाग हत्याकांड (Jallianwala Bagh Tragedy)–सरकार की इस नीति का विरोध करने के उद्देश्य से 11 अप्रैल को अमृतसर में जनता ने हड़ताल की तथा जुलूस निकाला। सैनिक पदाधिकारियों की ओर से इसके विरोध में 12 अप्रैल को सार्वजनिक सभा करने पर रोक लगा दी गयी, किन्तु इस प्रतिबंध का नोटिस नगर में अच्छी तरह नहीं घुमाया गया, फलतः बहुत से लोग इस प्रतिबंध से अनभिज्ञ थे। **13 अप्रैल 1919 को बैसाखी के दिन अमृतसर के जलियांवाला बाग में** एक बड़ी सभा का आयोजन किया गया। इस दिन बाग में लगभग 20 हजार लोग उपस्थित थे। जनरल डायर 100 भारतीय और 50 अंग्रेजी सैनिकों को लेकर जलियांवाला बाग में पहुँच गया। वह अपने साथ एक मशीनगन भी ले गया था, परन्तु इसको वह अंदर नहीं ले जा सका क्योंकि जलियांवाला बाग में एक ही रास्ता जाता था और वह भी बहुत तंग था। इसके अंदर मशीनगन नहीं ले जाई जा सकती थी। सभा काफी शांतिपूर्ण हो रही थी, जिसमें डॉक्टर सत्यपाल, किचलू तथा गाँधी की रिहाई की मांग के अतिरिक्त रॉलेट ऐक्ट का विरोध किया जा रहा था। जनरल डायर ने लोगों को चेतावनी दिए बिना उन पर 1650 गोलियां चलाई और उसने गोलियां चलाना उसी समय बंद किया जब उसका गोला बारूद समाप्त हो गया। सरकारी रिपोर्ट के अनुसार 400 लोग मारे गए और एक हजार या दो हजार के बीच में लोग घायल हुए। किन्तु वास्तव में मृतको तथा घायलों की संख्या बहुत अधिक थी। जनरल डायर का यह कृत्य शांति स्थापना के कारण नहीं बल्कि प्रतिशोध से प्रेरित था।

14 अप्रैल को अमृतसर में **"मार्शल लॉ"** लगा दिया गया। पंजाब की घटनाओं की खबर पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। **सैनिक प्रशासन द्वारा जनता पर अमानवीय अत्याचार किए गए।** उन्हें सार्वजनिक रूप में कोड़ें लगाए गए। पेट के बल रेंगकर चलने को मजबूर किया गया। विद्यार्थियों तथा अध्यापकों पर अत्याचार हुए। अमृतसर की इस घटना की पंजाब में व्यापक प्रतिक्रिया हुई। **ताराचन्द ने लिखा है कि**–'यह महत्वपूर्ण नहीं है कि कितने लोग मरे। महत्वपूर्ण बात यह है कि ऐसे समय में जब कि इंग्लैण्ड की सरकार घोषणा कर रही थी कि वह राजनैतिक सुधारों द्वारा भारतीयों को स्व–शिक्षित करना चाहती है, भारत में उसके प्रतिनिधि यह पाठ पढ़ाने का प्रयास कर रहे थे, जिसका

असहयोग आंदोलन का कार्यक्रम
(Programmes of Non-Cooperation Movement)

असहयोग आंदोलन ने देश में एक अभूतपूर्व उत्साह पैदा कर दिया। असहयोग आंदोलन के दो पक्ष थे–

(A) **निषेधात्मक (Negative Aspects)**–कूपलैण्ड के अनुसार – 'ब्रिटिश भारत की राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक संस्थाओं का बहिष्कार कर सरकारी मशीनरी को पूरी तरह से ठप्प करना था।'

(B) **रचनात्मक एवं सकारात्मक पक्ष (Creative Aspects)**–जिसमें स्वराज्य के लिए लोगों को शिक्षा द्वारा जागरूक करना, सामाजिक कुरीतियों को दूर करना तथा आर्थिक आत्मनिर्भरता के लिए प्रयास करना था।

(A) निषेधात्मक **कार्यक्रम** (Negative Programmes)–

(1) सरकार से प्राप्त उपाधियों, वैतनिक एवं अवैतनिक पदों व सम्मानों का परित्याग करना।

(2) सरकारी एवं सरकारी मान्यता प्राप्त विद्यालयों एवं महाविद्यालयों का बहिष्कार करना।

(3) केन्द्रीय विधान सभा एवं प्रान्तीय परिषदों के चुनावों का बहिष्कार।

(4) सरकारी समारोहों, उत्सवों एवं भोजों में शामिल न होना।

(5) सरकारी अदालतों का त्याग करना।

(6) विदेशी वस्तुओं एवं वस्त्रों का बहिष्कार करना।

(7) सरकारी सैनिक अथवा असैनिक कार्य के लिए सहयोग एवं सेवाएँ प्रदान न करना।

(8) करों का भुगतान न करना।

(9) मनोनीत सदस्य स्थानीय संस्थाओं से त्याग पत्र दे दें।

(10) शराब अथवा मद्य निषेध।

(B) रचनात्मक **कार्यक्रम** (Creative Programmes)–निषेधात्मक कार्यों के माध्यम से गाँधी जी सरकार के साथ पूर्ण असहयोग करके सरकारी तन्त्र को विफल करना चाहते थे। परन्तु दूसरी ओर गाँधीजी ने आन्दोलन को सफल बनाने, जनता को जागरूक करने तथा आर्थिक आत्मनिर्भरता के लिए प्रयास करना चाहते थे। अतः उन्होंने निम्नलिखित रचनात्मक कार्यक्रमों को अपनाने पर बल दिया–

(1) एक करोड़ रूपये के तिलक फण्ड की स्थापना करना।

(2) स्वयं सेवकों की संख्या में वृद्धि करना।

(3) बेरोजगारों तथा अर्द्धबेरोजगारों के मध्य 20 लाख चरखों का वितरण।

(4) हिन्दू–मुस्लिम एकता को बढ़ाना।

(5) बच्चों की शिक्षा के लिए राष्ट्रीय विद्यालयों एवं महाविद्यालयों की स्थापना करना।

(6) पारस्परिक झगड़ों को सुलझाने के लिए 'निजी' पंचायतों की स्थापना करना।

(7) छूआछूत एवं अस्पृश्यता को दूर कर समानता स्थापित करना।

(8) स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग व खादी बुनने के लिए चरखा चलाना, सूतं कातना एवं कपड़ा बुनना।

असहयोग आंदोलन का आरम्भ (Begining of Non-Cooperation Movement)

असहयोग आंदोलन के कार्यक्रम पर 1921 ई. में अमल प्रारम्भ हो गया। इस आंदोलन का नेतृत्व स्वयं गाँधीजी ने संभाला। उन्होंने **"केसरे–हिन्द"** की सरकारी उपाधि लौटा दी। जमनालाल बजाज ने अपनी **'रायबहादुर'** तथा रवीन्द्रनाथ टैगोर ने **'सर'** की उपाधि त्याग दी। अनेक प्रभावशाली नेताओं ने इस आंदोलन में भाग लेते हुए वकालत छोड़ दी। उनमें **मोतीलाल नेहरू, राजेन्द्रप्रसाद, चितरंजन** दास आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। हजारों छात्रों ने स्कूल–कॉलेजों का बहिष्कार किया। विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया

असहयोग आंदोलन में विभिन्न वर्गों की भूमिका
(Role of Different Classes in Non-Cooperation Movement)

(1) उच्च एवं मध्यम वर्ग (High and Middle Class)—मार्च 1921 तक वकालत छोड़ने वालों की संख्या केवल 180 थी, लेकिन धीरे–धीरे इस संख्या में बढ़ोतरी होने लगी। सरकारी सहायता प्राप्त शिक्षण संस्थानों में से बड़ी संख्या में अध्यापकों एवं छात्रों ने पद छोड़ दिए। अकेले बंगाल में 20 अध्यापक प्रतिमाह पद छोड़ रहे थे, जबकि 11,157 छात्र विद्यालय छोड़ चुके थे। राष्ट्रीय विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में प्रवेश बढ़ने लगा। जैसे बनारस की काशी विद्यापीठ, गुजरात विद्यापीठ आदि। आंशिक बहिष्कार के चलते विदेशी कपड़े का आयात 1920–21 के 102 करोड़ से घटकर 1921–22 में 57 करोड़ रह गया, जो लगभग 58 प्रतिशत की गिरावट थी। इस प्रकार उच्च एवं मध्यम वर्ग ने इस आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाई।

(2) व्यापारी वर्ग (Trader's Class)—इस वर्ग ने अपने तरह के इस पहले वृहद आंदोलन को पूर्ण आर्थिक सहायता दी। 1920 में कांग्रेस के कोष में 43000 रू. थे, जो 1921–22 की अवधि में बढ़कर 130 लाख रू. हो गया। व्यापारियों के इसी समर्थन से घबराकर सरकार ने अक्टूबर, 1921 में भारतीय प्रतिनिधियों का एक वित्तीय आयोग बनाया, जिसका उद्देश्य था भारतीय उद्योगों में शुल्क पद्धति को सुरक्षित रखने के प्रश्न पर विचार करना। बड़े व्यापारियों के एक बड़े गुट ने असहयोग आंदोलन का विरोध किया।

(3) श्रमिक वर्ग (Labour Class)—श्रमिकों ने अहयोग आंदोलन में बढ़ चढ़ कर भाग लिया और 1921 में 376 हड़ताले हुई, जिनमें 600351 श्रमिक शामिल हुए और 64,94,426 कार्य दिवसों की हानि हुई।

(4) किसान (Peasants)—किसानों ने असहयोग आंदोलन के विभिन्न कार्यक्रमों जैसे चरखा खादी द्वारा स्वावलम्बन, पंचायत, शराब, अस्पृश्यता विरोध, हिन्दू मुस्लिम एकता में बढ़ चढ़कर भाग ले रहे थे। बंगाल में लगभग 866 पंचायतें गठित की गई। शराब बंदी से पंजाब में 33 लाख एवं मद्रास में 65 लाख रूपए की आबकारी की कमी आई। चरखे के कारण हथक़रघों से निर्मित वस्त्रों में चढ़ाव आया। हिन्दू मुस्लिम में भाईचारा बढ़ा।

असहयोग आंदोलन का महत्व और मूल्यांकन (Importance & Evaluation of Non-Co-Operational Movement)

यद्यपि **चौरी चौरा** की घटना के कारण असहयोग आंदोलन को स्थगित कर दिया गया तथा यह अपने उद्देश्य एक वर्ष में स्वशासन की प्राप्ति में असफल रहा। विशेषकर विधानसभाओं के बहिष्कार एवं पंचायत प्रणाली की स्थापना से सम्बन्धित मामलों में यह असफल रहा, किन्तु रचनात्मक कार्यक्रमों में इसे अभूतपूर्व सफलता मिली। यह लाखों लोगों को अंग्रेजी राज के खिलाफ हुए आंदोलन में जोड़ने में सफल रहा। इस कारण असफल होते हुए भी भारत के राष्ट्रीय आंदोलन में इसे महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

इस आंदोलन द्वारा राष्ट्रवादी भावना और राष्ट्रीय आंदोलन देश के सुदूर भागों में फैल गए। **कूपलैंड ने लिखा है – "गाँधीजी ने आंदोलन को क्रान्तिकारी बनाने के साथ–साथ लोकप्रिय भी बना दिया। अभी तक यह आंदोलन नगरों तक सीमित था, अब यह ग्रामीण जनता तक पहुँच गया। गाँधीजी के व्यक्तित्व ने भारतीय ग्रामों में भी जाग्रति उत्पन्न कर दी थी।"**[2] भारतीय जनता में ब्रिटिश सरकार के प्रति डर और भय की भावना अब नहीं रही। उनमें अपार आत्मविश्वास तथा आत्मसम्मान तथा संगठित एकता की भावना का विकास हुआ। कांग्रेस के उद्देश्य में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ तथा अब वह सक्रिय आंदोलन को अपना कार्यक्रम समझने लगी। **नेहरू का कहना है–'गाँधी के असहयोग आंदोलन ने आत्मनिर्भरता एवं शक्ति संचित करने का पाठ पढ़ाया। असहयोग का कार्यक्रम तथा गाँधीजी की असाधारण प्रतिभा ने देशवासियों को अपनी ओर आकर्षित किया और उनमें आशा का संचार किया।**[3]

किन्तु आंदोलन के स्थगन ने महात्मा गाँधी की लोकप्रियता घटा दी। शीघ्र ही 10 मार्च 1922 को गाँधी जी को गिरफ्तार कर लिया गया तथा उन पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया। उन्हें 6 वर्षों के लिए जेल की सजा दी गई। कांग्रेस के अंदर भी विद्रोह की भावना बलवती हो गई, जिसने स्वराज दल के उदय को संभव बना दिया।

स्वराज दल
[Swaraj Party]

सन् 1922–29 ई. का काल अनेक दृष्टिकोणों से महत्वपूर्ण है। इस काल का आरम्भ असहयोग आंदोलन की समाप्ति और स्वराज दल की स्थापना के साथ हुआ। महात्मा गाँधी के नेतृत्व में साम्राज्यवाद के विरूद्ध आवाज उठाने वाले सभी प्रकार की विचारधाराओं से सम्बन्धित लोगों के लिए एक शक्तिशाली मंच के रूप में कांग्रेस का उदय हुआ। गाँधीजी का प्रथम आंदोलन (1920–22) के दौरान कांग्रेस की जड़ें सभी वर्गों के लोगों तक फैल गई। गाँधीजी द्वारा दिए गए नारे **'एक वर्ष में स्वराज'** ने असहयोग आंदोलन की लोकप्रियता को बहुत अधिक बढ़ा दिया तथा उसे एक जनआंदोलन में परिवर्तित कर दिया था। किंतु 1922 ई. में असहयोग आंदोलन के स्थगन ने निराशा का वातावरण उत्पन्न कर दिया। कांग्रेस की लोकप्रियता में कमी आई और उसके सदस्यों की संख्या 1923 तक सिर्फ कुछ लाख रह गई। ब्रिटिश सरकार ने स्थिति का लाभ उठाते हुए दमन की नीति अपनाई। इस समय गाँधीजी जेल में थे और देश के समक्ष कोई निश्चित कार्यक्रम नहीं था।

उपरोक्त परिस्थितियों में बहुत से लोगों के मन में गाँधीवादी तरीकों के औचित्य के प्रश्न पर संदेह की भावना उत्पन्न होने लगी। हिन्दू–मुस्लिम एकता तेजी से अदृश्य होने लगी। दोनों सम्प्रदायों के मध्य तनाव और साम्प्रदायिक झगड़ो के शुरू होने से देश की सारी शक्ति इसी समस्या के समाधान मे लगी रही। कांग्रेस के रचनात्मक कार्यक्रम जो बुनियादी तौर पर सामाजिक–आर्थिक कार्यक्रमों में सुधार लाने से सम्बन्धित थे, उच्च मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों को आकृष्ट करने में असफल रहे।

देशबन्धु–चितरंजनदास तथा पंडित मोतीलाल नेहरू के नेतृत्व में कांग्रेस का एक शक्तिशाली हिस्सा कांग्रेस के कार्यक्रम में परिवर्तन की मांग करने लगा। यह दल विधान परिषदों मे भाग लेने में विश्वास रखता था। इनकी योजना यह थी कि विधान परिषदों के कार्य में आन्तरिक रूप से रूकावट डाली जाए। इस प्रकार की मांग करने वाले परिवर्तनवादी

कहे जाने लगे। राजगोपालाचारी, राजेन्द्रप्रसाद और सरदार वल्लभ भाई पटेल जैसे परंपरागत गाँधीवादियों ने विधान परिषदों मे प्रवेश के कार्यक्रम का कड़ा विरोध करते हुए गाँधीजी की रचनात्मक कार्यक्रमों को आगे बढ़ाने पर बल दिया। परिवर्तनवादियों के रचनात्मक कार्यक्रम के साथ–साथ परिषदों में प्रवेश के राजनैतिक कार्यक्रम पर बल दिया।

दिसम्बर 1922 में कांग्रेस के गया अधिवेशन में यह मामला उभरकर सामने आया, जहां राजगोपाचारी ने परिषदों मे प्रवेश के प्रस्ताव का विरोध करते हुए चितरंजन दास को कांग्रेस की अध्यक्षता से त्याग–पत्र देने के लिए मजबूर किया। इसके बाद **चितरंजन दास ने 31 दिसम्बर 1922 को स्वराज पार्टी के गठन की घोषणा की**, जिसके वे **स्वयं अध्यक्ष** तथा **मोतीलाल नेहरू सचिव नियुक्त किये गये।**

कांग्रेस में अपरिवर्तनवादियों की विजय अधिक दिनों तक स्थिर नहीं रह सकी। तत्कालीन परिस्थितियों से स्पष्ट हो गया था कि सविनय अवज्ञा आंदोलन को एक राष्ट्रीय कार्यक्रम के रूप में पुनः स्थापित नहीं किया जा सकता। अतः सितम्बर 1923 को दिल्ली में हुए कांग्रेस के विशेष अधिवेशन में अध्यक्ष मौलाना अबुल कलाम आजद ने कांग्रेसियों को आने वाले चुनावों मे भाग लेने की अनुमति दे दी। दिसम्बर 1923 के काकीनाडा में हुए कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में परिषदों में प्रवेश को मान्यता प्रदान की गई। कांग्रेस समर्थकों तथा सदस्यों से गाँधी के रचनात्मक कार्यक्रमों को और अधिक सक्रियता प्रदान करने को कहा गया। गाँधीजी ने भी शुरू में स्वराज दल की नीतियों का विरोध किया था, किन्तु फरवरी 1924 में जेल से छूटने के बाद उन्होंने भी स्वराज दल की नीतियों से समझौता करना उचित समझा। संभवतः देश की बदली हुई परिस्थितियों मे उन्होंने भी राजनीति व रणनीति के परिवर्तन को उचित समझा।

स्वराजवादियों ने गाँधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम अर्थात चरखा कातना, खादी का प्रयोग, ग्राम सुधार तथा छुआछूत को समाप्त करने के कार्यक्रम को भी अपना लिया और स्वराज–दल अपना राजनैतिक अभियान को चलाता रहा।

स्वराज-दल के गठन के लिए उत्तरदायी परिस्थितियां
(Circumstances Responsible for The Establishment of Swaraj Party)

भारत–सचिव लार्ड ऑलिविएर (Lord Olivier) 1924 (श्रम दल के) ने हाउस ऑफ लार्ड्स में दिये गये भाषण में स्वराजवादी दल के उत्थान के कारणों का इस प्रकार ब्यौरा दिया था –

(1) लार्ड्स सभा द्वारा ब्रिटेन में जलियांवाला बाग हत्याकांड के सम्बन्ध में जनरल डायर को समर्थन देने का प्रस्ताव पारित करना।

सभा ने यह कहा था–"डायर को सेना से निकालना न केवल अन्याय है, अपितु इससे एक बड़ा भयानक उदाहरण प्रस्तुत हो जायेगा। अंग्रेजी जनता और समाचार–पत्रों ने डायर को **"भारत–रक्षक"** की संज्ञा दी और उसके समर्थन के लिए बहुत–सा धन एकत्रित किया था।

(2) 1923 में भारत सरकार द्वारा जन साधारण के विरोध करने और केन्द्रीय विधानसभा के विरोध में मत प्रकट करने पर भी नमक–कर को दुगुना करना ठीक नहीं था। लार्ड रीडिंग को पारित किया था। ने अपने विशेषाधिकारों का प्रयोग करके इस नमक विधेयक

(3) क्राउन के उपनिवेश दक्षिणी अफ्रीका तथा कीनिया में भारतीयों के साथ किया जाने वाला अन्यायपूर्ण व्यवहार। कीनिया में भारतीयों की संख्या श्वेतवासियों की तुलना में तीन गुना अधिक थी, परन्तु कीनिया के विधानमण्डल ने श्वेत वयस्कों को मताधिकार दे दिया पर भारतवासियों को इससे वंचित रखा। इस प्रकार भारतीय दूसरे स्तर के नागरिक बन गये।

(4) अहिंसक अवज्ञा जांच समिति, जिसे कांग्रेस ने नियुक्त किया था, ने अपनी रिपोर्ट में कहा था कि देश अवज्ञा आंदोलन के लिए तैयार नहीं था। कांग्रेस द्वारा रचनात्मक कार्यक्रम के प्रति लोगों में अधिक उत्साह नहीं था। अतः चितरंजन दास और मोतीलाल नेहरू ने यह अनुभव किया कि सार्वजनिक उत्साह को उभारने के लिए नई राजनीति अपनाई जाये।

(5) उदारवादी दल ने नये संविधान के अधीन पहली बार चुनाव लड़ा था और कई स्थान भी प्राप्त किए थे, किन्तु वह राष्ट्रीय हितों को स्पष्ट करने में अधिक सफल नही हुआ था। नवम्बर 1922 में ब्रिटिश सरकार ने यह स्पष्ट कर दिया था कि संविधान को शीघ्र परिवर्तित किया जायेगा। इसी प्रकार राजाओं का संरक्षण–अधिनियम और नमक–कर को दुगुना करना भी भारतीय जनता को अच्छा नही लगा। स्वराजवादी दल ने कहा कि यह सब सरकार से असहयोग करने के अप्रभावी परिणाम के कारण हुआ है।

स्वराज–दल के उद्देश्य और कार्यक्रम

(Aims and Programmes of The Swaraj Party)

स्वराजवादियों का उद्देश्य सरकार के कार्य में अडंगा लगाना और अन्दर से उसे नष्ट करना था। अड़गा (Obstruction) शब्द का अर्थ स्पष्ट करते हुए स्वराजवादियों ने बताया कि – 'हमारा ध्येय तो नौकरशाही द्वारा स्वराज के मार्ग में डाली गई रूकावटों का मुकाबला करना है और जब हम अड़गा शब्द का प्रयोग करते हैं, तो इसी मुकाबले से हमारा तात्पर्य है।'

स्वराजवादियों के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित थे–

(1) भारत को स्वराज दिलाना।

(2) उस परिपाटी को समाप्त करना, जो ब्रिटिश सत्ता के अधीन भारत में विद्यमान थी।

(3) कौंसिल में प्रवेश कर असहयोग के कार्यक्रम को सफल बनाना।

(4) सरकारी नीतियों का विरोध करना और उसके कार्यों में अडंगा या बाधा उपस्थित करना जिससे सरकारी कार्य में व्यवधान पैदा हो और सरकार अपनी नीतियों में परिवर्तन के लिए विवश हो जाए।

स्वराज दल का संविधान स्वराज दल के प्रथम अधिवेशन में तय किया गया जो मार्च 1923 में इलाहाबाद में मोतीलाल नेहरू के निवास स्थान पर हुआ। इस दल ने 14 अक्टूबर 1923 को अपना एक घोषणा पत्र जारी किया, जिसमें उन्होंने दल की नीतियों और कार्यक्रम पर प्रकाश डाला।

कांग्रेस ने यह तो कहा था कि स्वराज उनका उद्देश्य है, किन्तु उन्होंने यह स्पष्ट कभी नहीं किया था कि स्वराज का अर्थ क्या है? स्वराज दल ने अधिक व्यावहारिक बात कही और यह कहा कि स्वराज का अर्थ डोमिनियन स्टेटस अर्थात औपनिवेशिक दर्जा प्राप्त करना है।

चितरंजन दास ने कहा कि स्वराज दल कांग्रेस का एक अभिन्न अंग है और वह सदैव अहिंसामक सहयोग नीति का समर्थन करेगा। स्वराज दल का परिषदों में जाना केवल कांग्रेस के ही कार्यक्रम का विस्तार है, ताकि वह भी विधान मण्डलों तथा सार्वजनिक निकायों में चुने हुए पदों को अपने अधिकार में ले सके।

स्वराज–दल की योजना यह थी कि वह विधामण्डलों में सभी चुनाव योग्य स्थानों को जीत ले, ताकि अवांछनीय लोग विधान मण्डलों में न जा सकें और सरकार को समर्थन न दे सकें। उनकी यह योजना भी थी कि वह पूर्ण उत्तरदायी सरकार प्रारम्भ करने के लिए प्रस्ताव रखें। यदि सरकार स्वराज दल की तर्कसंगत बात को न माने तो वह अपनी एक समान लगातार और अविच्छिन्न विरोध की अपनी नीति से विधानमण्डल का काम करना पूर्णतया असम्भव बना दें। विधान परिषदों के बाहर स्वराज दल ने गाँधीजी के नेतृत्व और उनके रचनात्मक कार्यक्रम को पूर्ण समर्थन देने का वचन दिया और कहा कि जब कभी वह अहिंसात्मक अवज्ञा आंदोलन करेंगे तो वे गाँधीजी को पूर्ण समर्थन करेंगे।

विधान परिषदों में स्वराज दल का कार्य (1923-1926)
(Swarajist's Activities in Legislative Councils [1923-1926])

सन् 1923 के चुनावों में स्वराज दल को अभूतपूर्व सफलता मिली। केन्द्रीय विधानसभा के 105 चुने हुए सदस्यों में 48 स्वराज दल के थे। यहां उन्होंने मालवीयजी के राष्ट्रवादी दल और जिन्ना के स्वतंत्र सदस्यों के साथ एक राष्ट्रवादी दल का गठन किया ताकि वे विधान सभा में मिलकर कार्य कर सकें। स्वतंत्र सदस्य स्वराज दल की तोड़–फोड़ की नीति में विश्वास नहीं करते थे, परन्तु वे यह समझते थे कि जब तक सरकार हमारी शिकायतें दूर नहीं करती, तब तक सरकार को लाभ न दिये जाने की नीति का अनुसरण करने में कोई हानि नहीं है।

इन तीनों दलों की सम्मिलित संख्या सभा में बहुतम में थी और वह सरकार के राजकीय सदस्यों तथा मनोनीत सदस्यों के मिले–जुले गुट को जब चाहे परास्त कर सकते थे। प्रांतीय विधान परिषदों में स्वराज दल केन्द्रीय प्रान्तों में पूर्ण बहुमत प्राप्त करने में सफल हो गया और बंगाल में सबसे बड़े दल के रूप में उभरकर सामने आया। स्वराज दल की विरोधात्मक नीतियों के कारण इन दोनों प्रान्तों में 1924–1926 तक द्वैध शासन को निलम्बित करना पड़ा। अन्य प्रान्तों में भी स्वराजदल अपना प्रभाव प्रकट करने में सफल रहा।

स्वराज दल ने बहुत से स्थानीय ... भारत में ... जगह बहुमत प्राप्त किया। इलाहाबाद में पंडित जवाहरलाल नेहरू तथा अहमदाबाद में सरदार वल्लभ भाई पटेल लोकप्रिय नेता के रूप मे उभरकर सामने आये। सन 1924 ई के कलकता की नगरपालिका के चुनावों में स्वराज दल को अच्छा बहुमत प्राप्त हो गया।

स्वराज दल में फूट तथा इसका विघटन
(Split in The Swaraj Party and It's Disintegration)

जून 1925 को चितरंजन दास का देहावसान हो गया, जिससे स्वराज दल की लोकप्रियता को बहुत धक्का पहुँचा। अब दल के नेतृत्व का भार मोतीलाल नेहरू पर आ गया। वह दल को संगठित नहीं रख सके, क्योंकि वह कडे रूख के व्यक्ति थे तथा उन्हें विरोध सहन नहीं होता था। इसके अतिरिक्त स्वराज–दल वाले स्वयं भी अब विशुद्ध विरोध करने की नीति की आलोचना करने लगे थे। एक जून 1925 को भारत सरकार ने भारतीय सेना के भारतीयकरण के सम्बन्ध में एक समिति, जिसे **'स्कीन समिति'** कहते थे, नियुक्त की। पंडित मोतीलाल नेहरू ने उसकी सदस्यता स्वीकार कर ली। 1927 में कुछ प्रमुख स्वराजवादियों को इस्पात सुरक्षा समिति में स्थान दिया गया। वी.जे. पटेल ने केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा में अध्यक्षता स्वीकार कर ली और एस. बी. ताम्बे को गवर्नर जनरल की कार्यकारिणी परिषद में स्थान दिया गया। श्री एम.आर. जयकर तथा एन.सी. केलकर ने एक संवेदनशील दल का गठन किया, जिसका उद्देश्य सहानुभूतिपूर्ण सहयोग देना था। श्री लाजपत राय तथा पंडित मदनमोहन मालवीय ने एक स्वतंत्र दल का गठन कर लिया। सन 1926 के चुनावों में स्वराज–दल वालों को पराजय का सामना करना पड़ा। वे अपनी लोकप्रियता खो चुके थे और इतिहास के पन्नों में खो गए।

स्वराज दल के कार्यक्रम पर कांग्रेस प्रतिक्रियाएँ
(Congress Reactions on Swaraj Party Programme)

महात्मा गाँधी, राजगोपालचारी, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद एवं वल्लभ भाई पटेल आदि कांग्रेस नेताओं का स्वराजवादियों की 'अडंगा नीति' की सफलता में सन्देह था। श्री विपिन चन्द्रपाल एवं श्रीमती एनीबेसेन्ट आदि का मानना था कि अडंगा नीति एकदम व्यर्थ है। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने इस नीति के बारे में कहा कि 'अड़ंगा नीति' बेगार तथा अर्थ शून्य है। इससे सरकार तो कमजोर नहीं होगी, वरन लगातार अडंगा लगाने से नौकरशाही अपनी स्थिति पहले से भी दृढ कर लेगी। बिना ऐसे दल के जिसका क्रान्तिकारी दृष्टिकोण न हो, कौंसिल को तोड़ने का कार्यक्रम सफलता पूर्वक नहीं चलाया जा सकता है।

स्वराज दल का स्वतंत्रता संग्राम में योगदान
(Contribution of The Swaraj Party in Freedom Struggle)

कुछ आलोचकों ने स्वराज दल के विरोध की नीति को दोषपूर्ण, अव्यावहारिक और निरर्थक की संज्ञा दी है, जिसमें अन्तर्विरोध निहित थे। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने इसे निरर्थक कहा है।

जकारिया के अनुसार– **"स्वराज दल के लोग ऐसे थे, जो अपनी रोटी रखना भी चाहते थे और उसे खाना भी चाहते थे। वे अपनी लोक–प्रियता बनाए रखने की भावना से अतिवाद की बात करते थे और दूसरी ओर संसदवादी भी बनाना चाहते थे। इसके फलस्वरूप स्वराज दल के लोग वाक्‌चातुर्य में लग जाते थे। कहना मुश्किल था कि कहां पर सहयोग अथवा असहयोग है।"**

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि स्वराज दल ने भारतीय सवतंत्रता संग्राम में एक विशेष भूमिका निभाई। यद्यपि उनकी भूमिका नकारात्मक और अवरोध की थी, परन्तु अंग्रेज केवल यही भाषा समझते थे और इस नीति से बहुत लाभ हुआ। उनकी स्वशासन की मांग स्वीकार तो नहीं की गई, परन्तु इस पर वाद–विवाद अवश्य हुआ और ब्रिटेन के प्रधानमंत्री रैम्जे मैकडोनाल्ड ने यह घोषणा की– **"भारत को औपनिवेशिक स्वराज्य का दर्जा देना श्रमिक सरकार का उद्‌देश्य तथा इच्छा है।"** इसके उपरान्त जब भी भारत के लिए संवैधानिक सुधार की बात होती थी तो प्रश्न का आधार औपनिवेशिक स्वशासन ही होता था।

स्वराजवादियों ने 1922 में असहयोग आंदोलन वापस ले लिये जाने पर जब जनता अत्यधिक निराश थी, तब भी जनता के जोश को बनाए रखा। उन्होंने विधान परिषदों के मंच को राष्ट्रीय प्रचार का एक साधन बना लिया। सदस्यों द्वारा दिए गए भाषणों तथा उनके द्वारा यहां रखे गए प्रस्तावों को राष्ट्रीय समाचार–पत्रों ने बहुत उठाया और इस प्रकार कांग्रेस की स्वराज की मांग को बनाए रखा।

स्वराज दल ने ब्रिटिश तानाशाही और भारतीय जनपद सेवा की भारतीय लोगों के प्रति निष्ठुर नीति का अनावृत किया। उनके भाषणों का समस्त संसार में प्रसार हुआ। इससे संसार का ध्यान भारत की स्वराज की मांग की ओर आकर्षित हुआ।

जब गाँधीजी अपने असहयोग आंदोलन की समाप्ति के बाद कुछ समम के लिए कार्यशील राजनीति से पीछे हट गए तो स्वराज दल के लोगों ने ही कार्यशील राजनीति को आगे बढ़ाया और अपने ही ढंग से देश की सेवा की।

आगे चलकर महात्मा गाँधी ने भी इस बात को स्वीकार किया कि स्वराज दल का परिषदों में आने का कार्यक्रम ठीक था और उन्हें स्वयं ही परिषदों में जाने के कार्यक्रम को समर्थन देना चाहिए था। यद्यपि उनके कुछ कट्टरपंथी अनुयायी उनके इस विचार से सहमत नहीं थे।

स्वराज दल ने अपने कार्यकलापों से यह उजागर कर दिया कि 1919 की सुधार योजना दोषपूर्ण है और जनता उससे बिल्कुल सन्तुष्ट नहीं है, सरकार की निरंकुशता की निरन्तर आलोचना की, जिसके कारण सरकार का यह आडम्बर समाप्त हुआ कि भारत में शासन जनता की इच्छाओं के अनुसार चलाया जा रहा है।

स्वराजवादियों के प्रयास से ही सरकार ने निर्धारित समय से दो वर्ष पूर्व साइमन कमीशन की नियुक्ति की। 1924 ई. में गोलमेज सम्मेलन बुलाने की मांग की, जिसे सरकार ने 1930 ई. में माना। उन सबके परिणाम स्वरूप भारत की संवैधानिक प्रगति को विशेष प्रोत्साहन